IJNRD.ORG ISSN : 2456-4184
INTERNATIONAL JOURNAL OF NOVEL RESEARCH AND DEVELOPMENT (IJNRD) | IJNRD.ORG
An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

आचार्य अभिनवगुप्त का ध्वनि–सिद्धान्त

(चन्द्र किशोर शास्त्री)

असि0 प्रोफेसर
संस्कृत – विभाग,
ब्रह्मावर्त पी0जी0 कालेज, मन्धना, कानपुर नगर, उ0प्र0।
Email: drck.kn10@gmail.com

सारांश

आचार्य आनन्दवर्धन (9वीं शताब्दी) के 'ध्वन्यालोक' संज्ञक साहित्य शास्त्रीय ग्रन्थ पर आचार्य अभिनवगुप्त ने 'लोचन' संज्ञक टीका लिखकर काव्यजगत् में ध्वनि को परम महत्त्व प्रदान किया है। लोचन टीका के पूर्व ध्वन्यालोक पर 'चन्द्रिका' नामक कोई व्याख्या लिखी गई थी, इसका उल्लेख आचार्य अभिनवगुप्त ने लोचन में किया है–**'इत्यलं पूर्ववंश्यैः स विवादेन'**। इससे यह संकेत मिलता है कि 'चन्द्रिका' के व्याख्याकार आचार्य अभिनवगुप्त के ही वंश के थे। अपनी 'लोचन' टीका के महत्त्व के बारे में आचार्य अभिनवगुप्त कहते हैं–क्या चन्द्रिका के द्वारा बिना लोचन के आलोक का बोध हो सकता है? कभी नहीं। इसलिए आचार्य अभिनवगुप्त ने लोचन का उन्मीलन, लोचन–ध्वन्यालोक–1/19 में इस प्रकार किया–

किं लोचनं बिनालोको याति चन्द्रिकयापि हि।

तेनाभिनवगुप्तोऽत्र लोचनोन्मीलनं व्यद्धात्।।

प्रस्तावना

साहित्य तथा दर्शन का शोभन समन्वय करने का श्रेय आचार्य अभिनवगुप्त को ही है। सर्वतन्त्र स्वतन्त्र होने के साथ ही ये एक अलौकिक साधक पुरूष थे। साहित्यशास्त्र में आचार्य अभिनवगुप्त की तीन कृतियाँ अत्यन्त प्रसिद्ध हैं–

1.अभिनवभारती।

2.ध्वन्यालोकलोचन।

3.काव्यकौतुक विवरण।

'ध्वन्यालोक–लोचन' ध्वनि प्रतिष्ठापक आचार्य आनन्दवर्धन कृत 'ध्वन्यालोक' की टीका है, जो वास्तव में आलोचकों को लोचन (आलोकदृष्टि) प्रदान करती है। वस्तुतः इस टीका की सहायता के बिना ध्वन्यालोक में प्रतिपादित तत्त्वों का सम्यक् बोध नहीं हो सकता था । इस टीका में रसशास्त्र के प्राचीन व्याख्याकारों के सिद्धान्त, जिनकी उपलब्धि अन्यत्र

दुर्लभ है– एकत्र दिये गये हैं। अन्त में इसमें आचार्य अभिनवगुप्त ने यह भी स्पष्ट लिखा है कि 'अलंनिजपूर्ववंश्यैर्विवादेन।' अर्थात् अपने पूर्वजों के साथ अधिक विवाद करने से क्या लाभ? अतः साहित्यशास्त्र में लोचन का महत्त्व व्याकरण में 'महाभाष्य' के समान है।

मुख्यशब्द

लोचन, चन्द्रिका, उन्मीलन, साहित्य–दर्शन का शोभन समन्वय, ध्वनि–सिद्धान्त, प्रतिष्ठापक, सर्वतन्त्र स्वतन्त्र, साधक पुरूष, अलंनिजपूर्ववंश्यैर्विवादेन।

अध्ययन का उद्देश्य

ध्वनि–सिद्धान्त में आचार्य अभिनवगुप्त के महत्त्व को बताना।

ध्वनि शब्द के अर्थ का निर्धारण ध्वनिकार के ही शब्दों से होता है–जहाँ अर्थ स्वयं को तथा शब्द अपने अभिधेय अर्थ को गौण बना कर उस प्रतीयमान अर्थ को अभिव्यक्त करते हैं, उस काव्यविशेष को विद्वान् लोग 'ध्वनि' कहते हैं–

यत्रार्थः शब्दो वा तमर्थमुपसर्जनीकृतस्वार्थौ।

व्यङ्क्तः काव्यविशेषः स ध्वनिरितिसूरिभिः कथितः।। [1]

ध्वनिकार ने उक्त कारिका की व्याख्या में लिखा है कि –जहाँ विशिष्ट वाच्यरूप अर्थ तथा विशिष्ट वाचक रूप शब्द 'उस अर्थ को' प्रकाशित करते हैं, वह काव्यविशेष ध्वनि कहलाता है–

यत्रार्थो वाच्यविशेषः वाचकविशेषः शब्दो वा, तमर्थ व्यङ्क्तः स काव्यविशेषो ध्वनिरिति। [2]

'तमर्थम् पद का स्पष्टीकरण पूर्ववर्ती दो कारिकाओं में किया गया है, अर्थात् वह प्रतीयमान अर्थ कुछ और ही चीज है, जो रमणियों के प्रसिद्ध–मुख, नेत्र, श्रोत, नासिका आदि अवयवों से भिन्न उनके लावण्य के समान, महाकवियों की सूक्तियों में वाच्यार्थ से भिन्न अलग ही भासित होता है–

प्रतीयमानं पुनरन्यदेव वस्त्वस्ति वाणीषु महाकवीनाम्।
यत् तत् प्रसिद्धावयवातिरिक्तं विभाति लावण्यमिवाङ्गनासु।। [3]

इस अर्थ से आशय है, उस प्रतीयमान स्वादु–सरस अर्थ का जो प्रतिभाजन्य है और जो महाकवियों की वाणी में वाच्याश्रित अलंकारादि से भिन्न ललनाओं में अवयवों से अतिरिक्त लावण्य की भाँति कुछ अन्य ही वस्तु है। इसलिए यह विशिष्ट अर्थ–प्रतिभाजन्य है, स्वादु (सरस) है, वाच्य से अतिरिक्त कुछ दूसरी ही चीज है और वह प्रतीयमान है–

सरस्वती स्वादु तदर्थवस्तु निःष्यन्दमाना महतां कवीनाम्।
आलोक्यसामान्यमभिव्यनक्ति परिस्फुरन्तं प्रतिभाविशेषम् ।। [4]

1.आनन्दवर्धन (1998)। ध्वन्यालोक। सिद्धान्त शिरोमणि, विश्वेश्वर (हिन्दी व्याख्या) वाराणसी, भारत, ज्ञानमण्डललिमिटेड। 1/13, पृ–37
2.वही, 1/13 की वृत्ति, पृ–37
3.वही, 1/4, पृ–13
4.वही, 1/6, पृ–31

उस सरस अर्थवस्तु को विखेरती हुई महान कवियों की वाणी विलक्षण तथा अतिभासमान प्रतिभाविशेष को प्रकट करती है। इस पर लोचनकार आचार्य अभिनवगुप्त की टिप्पणी है–

'सर्वत्र शब्दार्थयोरुभयोरपि ध्वननव्यापरः। ..... स (काव्यविशेषः) इति। अर्थो वा शब्दो वा, व्यापारो वा। अर्थोऽपि वाच्यो वा ध्वनतीति शब्दोऽप्येवं व्यङ्ग्यो वा ध्वन्यत इति। व्यापारो वा

शब्दार्थयोर्ध्वननिमिति। कारिकया तु प्राधान्येन समुदाय एव वाच्यरूपमुखतया ध्वनिरिति प्रतिपादितम्।' [5]

अर्थात् सर्वत्र शब्द और अर्थ दोनों का ही ध्वननव्यापार होता है।.... यह 'काव्य विशेष' का अर्थ है– अर्थ या शब्द या व्यापार, वाच्य अर्थ भी ध्वनन करता है और शब्द भी, इसी प्रकार व्यङ्ग्य अर्थ भी ध्वनित होता है। अथवा शब्द अर्थ का व्यापार भी ध्वनन है। इस प्रकार कारिका के द्वारा मुखतया समुदाय शब्द, अर्थ–वाच्य (व्यंजक) अर्थ और व्यङ्ग्य अर्थ तथा शब्द और अर्थ का व्यापार ही ध्वनि है।

आचार्य अभिनगुप्त के कथन का अभिप्राय यह है कि कारिका के अनुसार – ध्वनि संज्ञा केवल काव्य को ही नहीं दी गई, अपितु शब्द, अर्थ और शब्द अर्थ के व्यापार इन सबको ध्वनि कहते हैं। [6]

ध्वनिशब्द के व्युत्पत्तिलभ्य अर्थों से भी उपर्युक्त पाँचों अर्थों की पुष्टि होती है–

1. **ध्वनिति ध्वनियति वा यः स व्यंजकः शब्दः ध्वनिः**– जो ध्वनित करे या कराये, वह व्यंजक शब्द ध्वनि है।
2. **ध्वनिति ध्वनयति वा यः स व्यंजकोऽर्थः ध्वनिः**–जो ध्वनित करे या कराये, वह व्यंजक अर्थ ध्वनि है।
3. **ध्वन्यते इति ध्वनिः**–जो ध्वनित किया जाये, वह ध्वनि है। इसमें–रस, अलंकार और वस्तु –व्यङ्गय अर्थ के ये तीनों रुप आ जाते हैं।
4. **ध्वन्यते अनेन इति ध्वनिः**–जिसके द्वारा ध्वनित किया जाये, वह ध्वनि है। इससे शब्द –अर्थ के व्यापार–व्यंजना आदि शक्तियों का बोध होता है।
5. **ध्वन्यतेऽस्मिन्निति ध्वनिः**–जिसमें वस्तु, अलंकार, रसादि– ध्वनित हों, उस काव्य को ध्वनि कहते हैं।

इस प्रकार ध्वनि का प्रयोग पाँच भिन्न–भिन्न परन्तु परस्पर सम्बद्ध अर्थों में होता है–

1.व्यंजक शब्द 2. व्यंजक अर्थ 3. व्यंङ्ग्य अर्थ 4. व्यंजना व्यापार और 5. व्यङग्यप्रधान काव्य । [7]

संक्षेप में ध्वनि का अर्थ है–व्यङ्ग्य, परन्तु पारिभाषिक रूप में यह व्यङ्ग्य वाच्याति शायी होना चाहिए: **'वाच्यातिशायिनि व्यङ्ग्ये ध्वनिः।'** इस अतिशय अथवा प्राधान्य का आधार है–चारुत्व अर्थात् रमणीयता का उत्कर्ष, 'चारुत्वोकर्षनिबन्धना हि वाच्यव्यङ्ग्ययोः प्राधान्य विवक्षा'। अतएव वाच्यातिशायी का अर्थ हुआ –वाच्य से अधिक रमणीय और ध्वनि का संक्षिप्त लक्षण हुआ–''वाच्य से अधिक रमणीय व्यङ्ग्य को ध्वनि कहते हैं। [8]

5.आनन्दवर्धन (वि0सं0 2073) गुप्त, अभिनव (ध्वन्यालोकः लोचन टीका समन्वित)। राय, गंगासागर (सम्पादक)। वाराणसी, भारत, चौखम्बा संस्कृत भवन। भूमिका, पृ–29

6.वही, भूमिका, पृ–30

7.आनन्दवर्धन (1998)। ध्वन्यालोक। सिद्धान्त शिरोमणि, विश्वेश्वर (हिन्दी व्याख्या)। वाराणसी, भारत, ज्ञानमण्डल लिमिटेड। भूमिका,पृ–3

8.वही, भूमिका, पृ–3

ध्वनि की मूल प्रेरणा–स्फोट सिद्धान्त

'ध्वनि–सिद्धान्त' की प्रेरणा ध्वनिकार को वैयाकरणों के –स्फोट–सिद्धान्त से मिली है। उन्होंने स्पष्ट रूप से स्वीकार किया है कि–'सूरिभिः कथितः' में सूरिभिः से तात्पर्य वैयाकरणों से है, क्योंकि वैयाकरण ही प्रथम विद्वान और व्याकरण ही सब विद्याओं का मूल है। वे श्रूयमाण–सुने जाते हुए वर्णों में ध्वनि का व्यवहार करते हैं। [9]

जैसा कि भर्तृहरि ने कहा है कि –महान व्याकरणशास्त्र की यत्नपूर्वक उपासना करनी चाहिए, क्योंकि यह सभी विद्याओं के प्रदीपरूप में अवस्थित हैं। सभी विद्याएँ व्याकरण से ही प्रकाशित होती हैं–

उपासनीयं यत्नेन शास्त्रं व्याकरणं महत्।
प्रदीपभूतं सर्वासां विद्यानां यदवस्थितम्।। [10]

लोचनकार आचार्य अभिनवगुप्त ने इस प्रसंग को और स्पष्ट किया है। उन्होंने वैयाकरणों के स्फोट–सिद्धान्त के साथ आलंकारियों के इस ध्वनि–सिद्धान्त का पूर्णतः सम्बन्ध स्थापित करते हुए तद्विषयक पृष्टाधार की सांगोपांग व्याख्या की है। ध्वनि के पाँच रूप – व्यंजक शब्द, व्यंजक अर्थ, व्यङ्ग्य–अर्थ, व्यंजना–व्यापार तथा व्यङ्ग्य–काव्य, इन सभी के लिए व्याकरण में निश्चित एवं स्पष्ट संकेत हैं। [11]

आलंकारिकों के अनुसार–प्रसिद्धशब्द व्यापारों से भिन्न व्यंजकत्त्व नाम का शब्द व्यवहार ध्वनि है। इस प्रकार व्यङ्ग्य–अर्थ, व्यंजक–शब्द, व्यंजक–अर्थ और व्यंजकत्त्व–व्यापार, यह चार तरह की ध्वनि हुई । इन चारों के एक साथ रहने पर समुदाय रूप काव्य भी 'ध्वनि' है। इस प्रकार लोचनकार आचार्य अभिनवगुप्त ने वैयाकरणों का अनुसरण करके पाँचों में ध्वनित्त्व सिद्ध कर दिया है। [12]

इस विवेचना का सारांश यह है कि–

1. जिसके द्वारा अर्थ का प्रस्फुटन हो , उसे 'स्फोट' कहते हैं– **स्फुटति अर्थः अस्मात् इति स्फोटः।**
2. शब्द के दो रूप होते हैं– एक व्यक्त अर्थात् विकृत रूप, दूसरा अव्यक्त अर्थात् प्राकृत (नित्य) रूप।

व्यक्त का सम्बन्ध–बैखरी और अव्यक्त का सम्बन्ध–मध्यमा वाणी से है, जो बैखरी की अपेक्षा सूक्ष्मतर है। पहला स्थूल ऐन्द्रिक रूप है, यह उच्चारण की विधि के अनुसार बदलता रहता है। दूसरा सूक्ष्म मानसरूप है, जो नित्य तथा अखण्ड है। यह हमारे मन में सदैव विद्यमान रहता है और शब्द अर्थात् वर्णों के संघात् विशेष को सुनकर उद्बुद्ध हो जाता है। इसको शब्द का स्फोट कहते हैं। स्फोट का दूसरा नाम ध्वनि भी है।

3. जिस प्रकार पृथक्–पृथक् वर्णों को सुनकर भी शब्द का बोध नहीं होता, वह केवल स्फोट या ध्वनि के द्वारा ही होता है, इसी तरह शब्दों का वाच्यार्थ ग्रहण कर भी काव्य के सौन्दर्य की प्रतीति नहीं होती, वह केवल व्यङ्ग्यार्थ या ध्वनि के द्वारा ही होती है।
4. व्याकरण में व्यंजक–शब्द, व्यंजक–अर्थ, व्यङ्ग्य–अर्थ, व्यंजना–व्यापार तथा व्यङ्ग्य–काव्य, ध्वनि के इन पाँचों रूपों के लिए निश्चित संकेत मिलते हैं। यह स्फोट शब्द, वाक्य और प्रबन्ध तक का होता है।

9.वही, भूमिका, पृ–3
10.आनन्दवर्धन (वि0सं0 2073) गुप्त, अभिनव (ध्वन्यालोकः लोचन टीका समन्वित)। राय, गंगासागर (सम्पादक)। वाराणसी, भारत, चौखम्बा संस्कृत भवन। भूमिका, पृ–31
11.आनन्दवर्धन (1998)। ध्वन्यालोक। सिद्धान्त शिरोमणि, विश्वेश्वर (हिन्दी व्याख्या)। वाराणसी, भारत, ज्ञानमण्डललिमिटेड। भूमिका,पृ–3
12.वही, भूमिका, पृ–5

इस प्रकार शब्द –साम्य और व्यापार–साम्य के आधार पर ध्वनिकार ने व्याकरण के **'स्फोट–सिद्धान्त'** से प्रेरणा प्राप्त कर ध्वनि–सिद्धान्त की उद्भावना की। [13]

अतएव निष्कर्षतः कह सकते हैं कि –ध्वनि का अर्थ–व्यङ्ग्य है, परन्तु यह व्यङ्ग्य वाच्यातिशायी होना चाहिए–**'वाच्यातिशायिनि व्यङ्ग्ये ध्वनिः**। इस अतिशय अथवा प्राधान्य का आधार–चारुत्त्व अर्थात् रमणीता का उत्कर्ष– **'चारुत्वोत्कर्षनिबन्धना हि वाच्यव्यङ्ग्ययोः प्राधान्य विवक्षा'।** अतएव वाच्यातिशायी का अर्थ हुआ –वाच्य से अधिक रमणीय और ध्वनि का संक्षिप्त लक्षण हुआ–''वाच्य से अधिक रमणीय व्यङ्ग्य''। इस प्रकार आचार्य अभिनवगुप्त के अनुसार–ध्वनि संज्ञा केवल काव्य की ही नहीं, अपितु शब्द, अर्थ और शब्द–अर्थ के व्यापार इन सबकों ध्वनि कहते हैं।

---

13. वही, भूमिका, पृ–5